हमारी राय आपकी राय

सूक्ति

“जो सोचता है कि अभी छोड़ो जिंदगी तो बाद में जिएंगे, वह उस अज्ञानी की तरह है, जो नदी को पार करने के लिए उसके पूरी तरह बह जाने का इंतजार करता है।”

होरेस

फर्जी पायलट

फर्जी दस्तावेजों के जरिए पायलट बने लोग बेहद खतरनाक हो सकते हैं लेकिन क्या ऐसा भ्रष्टाचार देश के हर क्षेत्र में नहीं है?

नागरिक उड्डयन क्षेत्र भारत के सबसे तेजी से विकास करते हुए क्षेत्रों में से है, लेकिन ‘हवाई’ योग्यता वाले पायलटों की वजह से इस क्षेत्र की विश्वसनीयता पर सवाल लग गए हैं। हवाई यात्रा में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण तत्व सुरक्षा है और पायलट की जरा-सी चूक बहुत महंगी पड़ सकती है। फर्जी दस्तावेजों के जरिये पायलट बने लोगों से ज्यादा सुरक्षा के लिए खतरा किससे हो सकता है। पकड़ी जाने वाली पहली महिला पायलट पर संदेह इसलिए हुआ था, क्योंकि उसने नियमानुसार पिछले पहियों पर विमान को उतारने के बजाय खतरनाक ढंग से अगले ‘नोज ह्वील’ पर उसे उतारा था और उसे पता भी नहीं था कि यह गलत और खतरनाक है। उसके बाद की जांच में एक के बाद एक पायलटों के फर्जी दस्तावेजों के राज खुलने लगे। सबसे बड़ी दिक्कत यह है कि देश के 40 से ज्यादा फ्लाइंग क्लबों में पायलटों को प्रशिक्षण दिया जाता है और कुछ फ्लाइंग क्लब या उनके अधिकारी पैसे के लालच में हेरफेर करते रहे हैं। फर्जी दस्तावेजों वाले ज्यादातर पायलट कठिन अंतिम परीक्षा में किसी विषय में सफल नहीं हुए, लेकिन उन्होंने फर्जी मार्कशीट बनवा ली। इसके दो पक्ष हैं, पहला कुछ फ्लाइंग क्लब धोखाधड़ी करते हैं, दूसरा, कई ऐसे नौजवान इन फ्लाइंग क्लबों में भर्ती हो जाते हैं, जिनमें इसकी काबिलियत ही नहीं होती। अब नागरिक उड्डयन महानिदेशालय (डीजीसीए) इन दोनों गड़बड़ियों को दूर करने के उपाय कर रहा है। पहला उपाय यह है कि फ्लाइंग क्लबों पर सख्त नजर रखी जाए और गड़बड़ी करने वालों के खिलाफ कार्रवाई की जाए। डीजीसीए की एक जांच कमेटी सारे फ्लाइंग क्लबों के दस्तावेजों की जांच कर रही है। यह देखना जरूरी है कि कहीं डीजीसीए में तो ऐसे तत्व नहीं हैं, जिनकी मिलीभगत से ये पायलट व्यावसायिक उड़ानों के कर्णधार बन गए हों। फिर यह भी सोचा जा रहा है कि फ्लाइंग स्कूलों में भर्ती के लिए मेडिकल या आईआईटी परीक्षा की तरह एक केंद्रीकृत परीक्षा हो, जिसमें चुने गए नौजवानों में पायलट बनने की न्यूनतम योग्यता होगी, यह कहा जा सकता है। यह भी जरूरी है कि जो पायलट फर्जी दस्तावेजों के साथ पाए गए हैं, उनके खिलाफ सख्त कार्रवाई हो, ताकि दोबारा ऐसा करने से लोग डरें।

एक बात और, अगर देश के तमाम क्षेत्रों में धोखाधड़ी और भ्रष्टाचार व्याप्त हो, तो सिर्फ इस एक क्षेत्र को कैसे बचाया जा सकता है। फर्जी दस्तावेजों वाले पायलट जितने खतरनाक हैं, उतने ही खतरनाक फर्जी लाइसेंस वाले वाहन चालक हैं, लेकिन हमारे परिवहन विभाग का पूरे देश में यह हाल है कि ईमानदारी से लाइसेंस लेना तकरीबन असंभव है। जो व्यक्ति ईमानदारी से लाइसेंस लेना भी चाहे, उसे भी आखिरकार गलत तरीके अपनाकर ही लाइसेंस लेना होता है। इसका अंजाम यह है कि सड़क दुर्घटनाओं के मामले में हमारा देश दुनिया में अव्वल है। राजधानी दिल्ली में ही हर साल लगभग एक हजार लोग सड़क दुर्घटनाओं में मरते हैं और समूचे देश में यह तादाद एक लाख के आसपास है। ड्राइविंग लाइसेंस लेने, दुकान का लाइसेंस लेने, बिजली का कनेक्शन लेने, मकान का नक्शा पास करवाने, बल्कि हर काम में भ्रष्टाचार है, तो यह सिर्फ जमीन पर ही कैसे रह जाएगा, आसमान में उड़ने वाले पायलटों तक कैसे नहीं पहुंचेगा? क्या हमें अपने राजनैतिक प्रशासनिक तंत्र की सफाई के बारे में अब भी नहीं सोचना चाहिए?

विदेशी अखबारों से

स्पीकर का गुस्सा

संसद के भीतर कुछ सांसद जिस तरह का आचरण करते हैं, उससे स्पीकर उचित ही नाराज होते हैं। ऐसे में, जातीय संसद के स्पीकर की निराशा के प्रति हम केवल सहानुभूति ही जता सकते हैं। चंद सप्ताहों के भीतर यह दूसरी बार है, जब हम इस मसले पर टिप्पणी कर रहे हैं। संसद में होने वाली बहस आज जिस स्तर पर पहुंच गई है और दुर्योग से जिसका हमें खुलासा करना पड़ा है, वह स्तर हैरान कर देने वाला है। जो लोग टीवी पर संसद की कार्यवाही देखते हैं, उनमें से अनेक अब इस आशंका से इसे देखने से बचेंगे कि कहीं उनके बच्चों पर इन बहसों का बुरा असर न पड़े। बहस के दौरान सांसदों ने एक-दूसरे के लिए जिस तरह से अपशब्दों का इस्तेमाल किया, उससे हम सभी शर्मिंदा महसूस कर रहे हैं, यकीनन माननीय संसद सदस्य भी ऐसा ही महसूस कर रहे होंगे।

द डेली स्टार, बांग्लादेश

इंसान और रोबोट

ग्यारह मार्च को आए भूकंप, सुनामी और उसके बाद परमाणु संकट के एक सप्ताह बाद से ही मीडिया ने एक सवाल पूछना शुरू कर दिया था : राहत और संकट नियंत्रण की प्रक्रिया में रोबोट कहां हैं? 17 मार्च के अंक में ब्रिटिश अखबार द टेलीग्राफ ने इस संकट के बेहद विडंबनात्मक तथ्य को उजागर करते हुए लिखा था कि जापान ने शेफ, पियानो वादक और यहां तक कि सूमो पहलवान के विकल्प में रोबोट तो बना लिए, लेकिन जब परमाणु हादसे से निपटने की खतरनाक चुनौती सामने आई, तो वह मानवीय प्रयासों के भरोसे ही दिखा। हालांकि जापान अपनी रोबोटिक टेक्नोलॉजी को लेकर काफी चर्चित देश रहा है और चेरनोबिल व थ्री मील आइलैंड हादसे के बाद वह परमाणु संयंत्रों में रोबोट का इस्तेमाल करता रहा है, लेकिन फुकुशिमा प्लांट में उसके रोबोट कहीं नहीं दिखे।

द चाइना पोस्ट, ताईवान

इनकी भी परीक्षा लो

हमारे नौकरशाहों ने पिछले 62 वर्षों में देश की प्रशासनिक प्रणाली इस कदर बिगाड़ कर रख दी है कि किसी भी राजनीतिक दल की सरकार आए, व्यवस्था अपने पुराने ढर्रे पर चलती रहती है और एक निष्ठावान नेता भी इस व्यवस्था में भ्रष्ट हुए बिना नहीं रह पाता। नेताओं के लिए कोई आचार-संहिता नहीं है। चुनाव लड़ने के लिए अनपढ़ व अपराधी भी चलेगा, इसलिए नौकरशाह उनकी कमजोरी का पूरा लाभ उठाते हैं। अब समय आ गया है कि कोई भी चुनाव लड़ने की वैधानिक शर्तों को सख्त बनाया जाए। चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार किसी भी ट्रस्ट को चलाने से पूर्व सतर्कता आयोग से अनुमति लें। जन-प्रतिनिधि कोई भी संपत्ति खरीदने से पूर्व आयकर विभाग की पूर्व अनुमति ले। संसद/विधानसभा के नियमों, अधिकारों व कर्तव्यों के बारे में उम्मीदवारों के ज्ञान की परीक्षा होनी चाहिए। इस परीक्षा में उत्तीर्ण व्यक्तियों को ही चुनाव लड़ने की इजाजत दी जानी चाहिए, ताकि किसी भी गलत काम करने से पूर्व उनमें कानून का डर बना रहे।

ओमप्रकाश त्रेहन
एन-10, मुखर्जी नगर, दिल्ली

गंदा पानी पीते लोग

राजधानी दिल्ली में दिल्ली जल बोर्ड द्वारा पिछले काफी समय से दूषित पेयजल सप्लाई करके लाखों लोगों के जीवन के साथ खिलवाड़ किया जा रहा है, जो बड़े ही दुख व चिंता की बात है। दिल्ली के उपराज्यपाल और मुख्यमंत्री से अनुरोध है कि राजधानी दिल्ली के लाखों लोगों को जल-जनित जानलेवा बीमारियों की ओर धकेलने वाले दिल्ली जल बोर्ड के दोषी अधिकारियों के खिलाफ वे सख्त से सख्त कार्रवाई करें और लोगों को शुद्ध पानी सप्लाई कराने की तत्काल व्यवस्था की जाए।

देशबंधु, संतोष पार्क,
उत्तम नगर, नई दिल्ली

हमारा एटमी जंजाल

‘जापान का जलजला और हमारा जंजाल’ शीर्षक लेख में शशि शेखर जी ने एक महत्वपूर्ण मुद्दा उठाया है कि हमें दूसरों की गलतियों से सीख लेकर अपने को सुधारना चाहिए। लेकिन हमारा राष्ट्रीय चरित्र इसमें सबसे बड़ी बाधा है। कॉमनवेल्थ गेम्स, आदर्श सोसायटी निर्माण तथा टू-जी स्पेक्ट्रम में उजागर हो गया है कि हमने अपने राष्ट्रीय चरित्र की अंतिम क्रिया कर दी है। आज भी यह एक रहस्य ही बना हुआ है कि हमारे प्रधानमंत्री परमाणु सौदे पर अपनी सरकार तक कुर्बान करने को क्यों तैयार हो गए थे, जबकि यह सर्वमान्य तथ्य है कि परमाणु बिजली सबसे महंगी है। चेरनोबिल की दुर्घटना का उदाहरण तो उस समय भी हमारे सामने था। लेकिन पूरा मीडिया उस समय इस सौदे के गुणगान में लगा था। भगवान न करे, यदि ऐसी दुर्घटना भारत में घटी, तो हम उसमें भी कमीशन बनाएंगे। आम जनता का क्या, वह तो मच्छर है।

ठाकुर सोहन सिंह भदौरिया, भदौरिया भवन, बीकानेर, राजस्थान

यह कैसा आंदोलन

विश्व के सबसे बड़े सार्वजनिक संगठन भारतीय रेलवे को सरकार ने इतना निर्बल बना दिया है कि आरक्षण की मांग को लेकर सिर्फ दो सौ लोग पटरी पर बैठे रहे और वे लाखों यात्रियों के लिए परेशानी का सबब बन गए। कानून व्यवस्था राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है। उत्तर प्रदेश की मौजूदा बसपा सरकार राज्य में विपक्षी दलों के आंदोलन को तो कुचल देती है। हजारों की भीड़ पर लाठियां चलवा देती है, वह अदालत की फटकार खाने तक दो सौ लोगों से रेलवे लाइन खाली नहीं करा सकी। मंशा साफ है। इस आंदोलन के कारण अब तक लगभग एक हजार गाड़ियां रद्द की जा चुकी हैं। रेलवे को सैकड़ों करोड़ रुपये की चपत लग चुकी है। ऐसे में, इस आंदोलन से आम लोग आजिज आ चुके हैं। कठोर कानून के अभाव में प्रत्येक आंदोलन के निशाने पर रेल पटरियां आ जाती हैं। चाहे वह नक्सलवाद हो, अलग राज्य की मांग हो या आरक्षण की मांग हो। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए कठोर कानून होना ही चाहिए।

उमेश प्रसाद सिंह
के-100, लक्ष्मी नगर, दिल्ली

आपराधिक निर्लज्जता

चिकित्सकों का जो चेहरा मध्य प्रदेश में उजागर हुआ है, उसने हमारे अंतःकरण को हिलाकर रख दिया है। हमारा सिर शर्म से झुक गया। जबलपुर के मेडिकल कॉलेज में जो घिनौना खेल खेला जा रहा था, वह संपूर्ण समाज और शिवराज सिंह सरकार के लिए बेहद शर्मनाक है। मर्यादा की सारी सीमाओं को लांघकर वहां बहन-बेटियों का शोषण किया गया। समाज में एक चिकित्सक को भगवान का दर्जा मिलता है। ऐसे में, चिकित्सा के मंदिर में हुए इस घिनौने कृत्य ने पूरी प्रशिक्षण व्यवस्था पर ही प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है। ऐसे कुकृत्यों के दोषी चाहे कितने भी प्रभावशाली क्यों न हों, वे सजा से बचने न पाएं। यदि हमें विकास का रास्ता अपनाना है, तो भौतिक समृद्धि के साथ-साथ नैतिक समृद्धि भी लानी होगी, क्योंकि नैतिक विकास के बिना भौतिक विकास अर्थहीन है।

युधिष्ठिर लाल कक्कड़
लक्ष्मी गार्डन, गुड़गांव, हरियाणा

आमदनी से अधिक खर्च

अब होड़ लगी है महंगाई-आबादी में
तो खर्चा इतना क्यों करते हो शादी में
गुजर-बसर हो कैसे निर्धन लोगों की
खर्चे दोगुने हुए आमदनी आधी में।

प्राणनाथ ‘प्राणमेरठी’
मेरठ, उत्तर प्रदेश

आज का एस एम एस

राजनीति का मुद्दा

विपक्षी पार्टियों को विकीलीक्स को धन्यवाद देना चाहिए, उन्हें लड़ने का मुद्दा मिल गया, वर्ना वे अब तक बजट में ही फंसे रहते।

महेश कुमार सिंह

साधारण डाक से पत्र भेजने के अलावा आप ईमेल और एसएमएस से भी अपनी राय भेज सकते हैं। एसएमएस से पत्र भेजने के लिए संदेश की जगह लिखें speed-post इसके बाद थोड़ी-सी खाली जगह छोड़कर अपनी बात लिखें और 54242 पर एसएमएस करें। साथ में अपना नाम जरूर लिखें। ईमेल से ‘आपकी राय’ भेजने के लिए हमारा पता है- hindustanspeedpost@gmail.com

लीबिया के युद्ध में उलझनें ही उलझनें

लीबिया दुनिया के गले की हड्डी बन गया है। किसी को पता ही नहीं कि वहां हमें करना क्या है? क्या सुरक्षा परिषद, क्या अरब लीग, क्या पश्चिमी राष्ट्र और क्या भारत, चीन व रूस जैसे देश, सभी भ्रम में हैं। सुरक्षा परिषद ने लीबिया के बारे में जो प्रस्ताव 17 मार्च को पारित किया, उसकी सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वह सर्वसम्मति से पारित नहीं हुआ है। 10 राष्ट्रों ने उसके पक्ष में मतदान किया और पांच बिल्कुल तटस्थ रहे। पक्ष में ब्रिटेन, फ्रांस और अमेरिका जैसे राष्ट्र हैं। ध्यान रहे कि चीन और रूस सुरक्षा परिषद के स्थायी सदस्य हैं। यदि वे वीटो कर देते, तो यह प्रस्ताव पारित ही नहीं हो पाता। यह ठीक है कि सुरक्षा परिषद में गुटबाजी नहीं हुई। जर्मनी ने अमेरिका और यूरोप का साथ नहीं दिया और कुछ अफ्रीकी व लातीनी अमेरिकी देशों ने भारत तथा चीन का साथ नहीं दिया, लेकिन सुरक्षा परिषद ने जो प्रस्ताव पारित किया है, उसमें स्पष्टता का अभाव है।

प्रस्ताव 1973 का मूल पाठ पढ़ने और 15 सदस्यों के भाषणों पर ध्यान देने से भी यह पता नहीं चलता कि सुरक्षा परिषद चाहती क्या है? सिर्फ नो फ्लाई जोन घोषित करने से कुछ नहीं होता, इसलिए अच्छा हुआ कि उसने अपने प्रस्ताव में यह भी जोड़ दिया कि लीबिया के ‘नागरिकों की रक्षा के लिए सभी जरूरी कदम उठाए जाएं।’ प्रस्ताव के इस दूसरे हिस्से के आधार पर ही फ्रांस, ब्रिटेन और अब अमेरिका के जहाज भी कर्नल गद्दाफी के ठिकानों पर हमले कर रहे हैं। उन्होंने लीबिया की वायुसेना को ही सिर्फ ठप्प नहीं किया है, वे उसकी थल-सेना और फौजी बैरकों पर भी हवाई हमले बोल रहे हैं। इस हमले के बावजूद गद्दाफी की फौज बागियों से लड़ रही है। और गद्दाफी कह रहे हैं कि वह जबर्दस्त सबक सिखाएंगे। भागेंगे नहीं, लड़ेंगे। इसी तरह चलता रहा, तो यह युद्ध काफी लंबा खिंच सकता है।

प्रस्ताव यह भी कहता है कि लीबिया में कोई विदेशी फौज किसी भी तरह का कब्जा नहीं करेगी। इसका अर्थ यह निकाला जा रहा है कि लीबिया में विदेशी सैनिक किसी भी कीमत पर नहीं उतारे जाएंगे। अमेरिका ने तो पहले ही हाथ झाड़ लिए हैं। असली समस्या फ्रांस और ब्रिटेन के सामने है। वे क्या करें? सबको पता है कि गद्दाफी की फौज का मुकाबला बागी अपने बलबूते नहीं कर सकते। उनके पास न पर्याप्त हथियार हैं, न साधन हैं, न संगठन है और न ही नेतृत्व है। ऐसे में, विदेशी सैनिकों को उतारना परम आवश्यक हो गया है। उसके बिना प्रस्ताव 1973 को लागू करना असंभव हो जाएगा।

यहां दो बातों में फर्क करने की जरूरत है। कब्जाधारी फौज और युद्धरत फौज। अफगानिस्तान और इराक में विदेशी फौजों ने अपना कब्जा जमा रखा है। ऐसे कब्जे की लीबिया में न तो जरूरत है और न ही बाहरी देशों में अब इतना दम बचा रह गया है। यदि विदेशी फौजें लीबिया में आकर लड़ती हैं और सत्ता-परिवर्तन करवाकर लौट जाती हैं, जैसे 1971 में भारत ने पूर्वी पाकिस्तान में किया था, तो यह सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव का उल्लंघन नहीं होगा।

लेकिन कोई भी राष्ट्र यह बात खुलेआम कहने के लिए तैयार नहीं है कि वह लीबिया में सत्ता-परिवर्तन चाहता है। किसी भी देश के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप करना संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर का उल्लंघन माना जाता है। गद्दाफी गला फाड़-फाड़कर कह रहे हैं कि जो लीबिया के साथ किया जा रहा है, वही लीबिया अमेरिका और यूरोपीय देशों के साथ करे, तो क्या वह उचित होगा? किसी भी राष्ट्र के आंतरिक मामलों में दखलंदाजी का सिद्धांत अगर सही मान लिया जाएगा, तो पश्चिम के शक्तिशाली राष्ट्र एशिया और अफ्रीका के दर्जनों देशों पर कब्जा कर लेंगे। उनके पास कब्जा करने के कई नए बहाने निकल आएंगे, जैसे सद्दाम हुसैन के पास रसायनिक हथियारों का बहाना बनाकर जॉर्ज बुश ने इराक पर कब्जा जमा लिया था।

इसी अहस्तक्षेप के सिद्धांत को आधार बनाकर भारत, रूस, चीन, जर्मनी और ब्राजील ने अपने आपको अलग कर लिया है, लेकिन सच्चाई तो यह है कि ये सभी देश अपने-अपने राष्ट्रहितों की रक्षा में लगे हुए हैं। इन राष्ट्रों को शक है कि कहीं गद्दाफी टिके न रह जाएं। उनसे संबंध खराब क्यों किए जाएं? वे यह भी सोचते हैं कि लीबिया में वे फ्रांस के पिछलग्गू क्यों दिखाई पड़ें? सुरक्षा परिषद में फ्रांस ही प्रस्ताव लाया और सबसे पहला हमला उसी ने बोला। चीन अमेरिका के साथ कंधे से कंधा मिलाकर अफ्रीकी और लातीनी जगत में अपनी छवि नहीं बिगाड़ना चाहता और रूस के नेताओं को रूसी जनता अफगानिस्तान-जैसी गलती दुबारा क्यों करने देगी? इसीलिए राष्ट्रपति दिमित्री मेदवेदेव और प्रधानमंत्री ब्लादिमीर पुतिन, दो अलग-अलग जुबान में बोल रहे हैं। भारत की समस्या यह है कि इधर गद्दाफी से उसके संबंध सुधर रहे थे और उन्होंने भारत को मोटा लालच भी दे रखा था। इसके अलावा अभी लीबिया के विरुद्ध जो फौजी कार्रवाई हो रही है, उसका नेतृत्व संयुक्त राष्ट्र नहीं, फ्रांस कर रहा है। भारत यदि सुरक्षा परिषद में पश्चिमी राष्ट्रों के साथ मिलकर वोट कर देता, तो उसे भी वहां अपनी फौजें भेजनी पड़तीं। खर्च ज्यादा और फायदा कम होता। इसके अलावा भारत को यह भी अंदाजा नहीं है कि अरब की जनता पश्चिमी हस्तक्षेप का समर्थन करेगी भी या नहीं?

सबसे ज्यादा परेशानी बराक ओबामा को है। उनके रक्षा और विदेश मंत्री ने कुछ दिनों पहले ही कहा था कि वे लीबिया में नो फ्लाई जोन का समर्थन नहीं करेंगे और लीबिया को दूसरा वियतनाम नहीं बनाएंगे। अमेरिकी लोगों ने भी जनमत सर्वेक्षण में इसी बात का समर्थन किया है। अमेरिका की दुविधा यह भी है कि वह बहरीन और यमन की बगावत के विरुद्ध है, तो अब लीबिया की बगावत का समर्थन कैसे करे। लीबिया के मामले में अरब लीग की स्थिति भी काफी हास्यास्पद हो गई है। उसके कारण ही सुरक्षा परिषद ने प्रस्ताव पारित किया। अब उसके महासचिव अमर मूसा कह रहे हैं कि पश्चिमी हमलों से हो रही नागरिकों की मौत से अरब जनता नाराज है। यह दिग्भ्रम शीघ्र दूर होना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र और पश्चिमी देशों को अपना लक्ष्य एकदम स्पष्ट करना चाहिए। या तो उन्हें लीबिया के बारे में मौन रहना चाहिए था या अब एक कदम उठा ही लिया है, तो उसे मंजिल तक पहुंचाना चाहिए।

लेखक भारतीय विदेश नीति परिषद के अध्यक्ष हैं

वेदप्रताप वैदिक

अमेरिका की दुविधा यह भी है कि वह बहरीन और यमन की बगावत के विरुद्ध है, तो अब लीबिया की बगावत का समर्थन कैसे करे। अरब लीग की स्थिति भी काफी हास्यास्पद हो गई है।

अपना-अपना भ्रष्टाचार

नक्कारखाना

‘यहूदी की लड़की’ नाटक का प्रख्यात संवाद है, ‘तुम्हारा गम गम है, हमारा गम कहानी, तुम्हारा खून खून है, हमारा खून पानी।’ अमेरिका के विख्यात राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट का एक वाक्य है, जो उन्होंने निकारागुआ के तानाशाह सोमोजा के बारे में कहा था कि यह सही है कि वह है, लेकिन वह हमारा...है (छूटे हुए शब्द का अंदाजा आप खुद लगा लें)। ये दोनों वाक्य भारतीय राजनीति के सूत्रवाक्य हैं। मसलन सारे राजनीतिक दल भ्रष्टाचार को लेकर इस कदर गला फाड़े हुए हैं कि ऐसा लगता है, मानों इन्हें राजनीति में भ्रष्टाचार से भयानक आपत्ति है, ये राजनीति को शुद्ध, स्वच्छ और पवित्र बनाना चाहते हैं। लेकिन जो दल राज्य के स्तर पर भ्रष्टाचार के खिलाफ जंग छेड़े हुए हैं, वे केंद्र में भ्रष्टाचार के आरोपों से अपना बचाव कर रहे हैं, जो केंद्र में भ्रष्टाचार के खिलाफ तलवार खींचे हुए हैं, वे राज्यों के भ्रष्टाचार से अपने भ्रष्टाचार को ढकना चाहते हैं। सब दलों का मानना यह है कि दूसरे का भ्रष्टाचार भ्रष्टाचार है, उनका भ्रष्टाचार तो मजबूरी है। जो लोग राज्य में सरकार बचाने के लिए भ्रष्टाचार को जायज ठहराते हैं, वे केंद्र में ऐसी कोशिश को घोर पाप बताते हैं।

इसी तरह, दूसरे का भ्रष्ट साथी इसलिए भ्रष्ट है, क्योंकि उसमें शराफत, नैतिकता, राष्ट्रीय हितों का ख्याल, जनता के प्रति प्रतिबद्धता कुछ भी नहीं। हम भ्रष्ट साथी को बर्दाश्त कर रहे हैं, क्योंकि हमारा सत्ता में रहना देश के हित में है।

ईसा मसीह ने कहा था कि पहला पत्थर वह मारे, जिसने कोई पाप न किया हो। इस बात को दो हजार बरस से ऊपर हो गए, अब लोगों के एक हाथ में नोटों का सूटकेस और दूसरे हाथ में पत्थर है। ‘क्या करें भाई, मजबूरी है, वैसे हम बहुत ईमानदार हैं।’

राजेन्द्र धोड़पकर

गुस्सा तो आए, लेकिन...

मनसा वाचा कर्मणा

वह गुस्से में तमतमा रहे थे। थोड़े से वक्त में ही तीन-चार लोगों की क्लास ले डाली थी। कोई उनके पास जाने की हिम्मत नहीं कर रहा था। हालांकि कई काम अटके पड़े थे।

कुछ लोग मानते हैं कि गुस्सा आना ही नहीं चाहिए। डॉ. लियॉन एफ. सेल्जर का मानना है कि हम गुस्से को मिटा नहीं सकते। गुस्सा जरूरी है, लेकिन वह आपके नियंत्रण में होना चाहिए। वह अंग्रेजी के प्रोफेसर और साइकोलॉजिस्ट, दोनों हैं। क्वींस कॉलेज और क्लीवलैंड स्टेट यूनिवर्सिटी में पढ़ाते रहे हैं। उनकी बेस्टसेलर किताब है, ‘द पैराडॉक्सिकल स्ट्रैटेजीज इन साइकोलॉजी।’

आखिर गुस्से का हम क्या कर सकते हैं? इतना तो तय है कि गुस्से में कम से कम कोई फैसला नहीं लेना चाहिए। अगर कोई फैसला लेने में ही दिक्कत आए, तो फिर गुस्से का क्या फायदा? हम फैसला आमतौर पर ठंडे दिमाग से लेते हैं। और ठंडा दिमाग तो तभी होगा न, जब हम गुस्से को दूर रखेंगे।

लेकिन गुस्सा ही न आए। यह कैसे हो सकता है? यह हो ही नहीं सकता कि कोई गलत काम हो रहा हो और आपको गुस्सा ही न आए। सेल्जर कहते हैं कि गुस्सा तो करना ही चाहिए। वह किसी गलत के लिए आपकी प्रतिक्रिया है। लेकिन वह गुस्सा हमारे नियंत्रण में होना चाहिए। कुछ भी गलत होता है, तो हमें गुस्सा आए। पर उसे हम पर कतई हावी नहीं होना चाहिए। गुस्सा आए और हम उस पर हावी हों। तब बात बनती है।

हम प्रतिक्रिया से नहीं बच सकते। इसीलिए गुस्से से भी नहीं बच सकते। बचना भी नहीं चाहिए। बस, इतना ध्यान रखना चाहिए कि वह गुस्सा हमारा ही नुकसान न कर बैठे। गुस्से को खत्म करने का मतलब तो असहज हो जाना है। जीने के लिए गुस्सा होना खतरनाक नहीं है। उस पर काबू न रह पाना खतरनाक है।

कानूनी दांव-पेच में फंस गए हैं खानाबदोश

वनाधिकार कानून ने कुछ वनवासियों को तो वन पर अधिकार दिया, लेकिन कई इससे दूर रह गए।

देश के जंगलों में सदियों से निवास करती आ रही आदिवासी जनजातियों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने के लिए केंद्र सरकार ने 13 दिसंबर, 2006 को संसद में अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम, संक्षेप में ‘वनाधिकार कानून’ पेश किया। पारित होने के बाद 1 जनवरी, 2008 से इस अधिनियम और इसके तहत बने नियम पूरे देश में लागू कर दिए गए। इसके पहले आदिवासियों का परंपरागत वनों पर अधिकार, जो कि ब्रिटिश शासनकाल में 1871 में कानून बनाकर उनसे छीन लिया गया था, वापस मिलने का रास्ता साफ हो गया। इस नए कानून में वन संपदा पर वहां के निवासियों के अधिकारों को परिभाषित किया गया, जो स्वागतयोग्य कदम माना जाना चाहिए।

लेकिन इस कानून के बनने से कई समुदाय इसके दायरे के बाहर रह गए। इनमें वे आदिम जनजातियां प्रमुख हैं, जो खानाबदोश जीवन व्यतीत करने की आदी हो गई हैं। इन्हें कानून की भाषा में नोमेडिक और डिनोटिफाइड ट्राइब्स कहा गया है। इसका मुख्य कारण तो यह है कि कुछ अपवादों को छोड़कर लगभग आदिम जनजातियां या खानाबदोश जनजातियों का अपने परंपरागत क्षेत्र में भी अन्य निवासियों की अपेक्षा बहुत छोटा समूह होता है। ऐसे में, वहां की ग्राम सभाओं में इनके अधिकारों के बारे में विरोध या इनके प्रति उपेक्षा की भावना स्वाभाविक बात है। इतना ही नहीं, खुद आदिम जनजातियों में कुछ समूह दूसरों की तुलना में ताकतवर और प्रभावी होते हैं। इसलिए उनके इलाके, यहां तक कि उनकी बस्तियों पर अधिकारों के आकलन की कार्रवाई अति दुरूह और विवादास्पद हो जाने का खतरा है, जिसका इस कानून में कोई स्पष्ट समाधान नहीं किया गया है।

कमेंट्री

नियमों में भी अनेक बातों का खुलासा नहीं हुआ है। मसलन, अधिनियम की धारा 3 (1) (ङ) में आदिम जनजातियों और कृषि पूर्व जनजातीय समुदायों के अधिकारों को स्वीकार किया गया है, लेकिन उनके बारे में कोई स्पष्ट चिह्नों या पहचान का उल्लेख नहीं है। कानून में आदिम जनजातियों या खानाबदोशों की सूची तो है, परंतु कृषि पूर्व आर्थिक व्यवस्था या घुमंतू जातियों या पशुपालक जनजातियों में कौन लोग आएंगे, इसका कहीं कोई उल्लेख नहीं किया गया है।

इन आदिम जनजातियों के बारे में उल्लेख न होने से इन घुमंतू और अर्द्धघुमंतू जनजातियों का जीवन इस कानून से और विषम और कठिन हो गया है। इसे एक उदाहरण से समझा जा सकता है। मान लीजिए कि एक घुमंतू जनजाति अपने जानवरों और परिवार के साथ अपने परंपरागत इलाके के वन में आती है और वहां से वनोपज इकट्ठा करती है। अब वन अधिकारी इस समुदाय को बाहरी घुसपैठिया बताकर कानून के मुताबिक इनका चालान कर सकते हैं। इससे बचने के जो उपाय कानून में बताए गए हैं, उनमें सबसे प्रभावी ग्राम सभा होती है, लेकिन इन चलंत समुदायों का आधुनिक कानून के ढांचे में फिट बैठने वाली कोई ग्रामसभा नहीं है। जिस गांव में ये जाते हैं, वहां की ग्रामसभा इन्हें अपना मानने से मना कर देती हैं। जातियों का उल्लेख न होने से अधिकारी इनकी जाति को आदिम मानने से इनकार कर सकते हैं।

राजस्थान, गुजरात में विचरण करनेवाली कई ऐसी घुमंतू और अर्द्धधुमंतू जनजातियां हैं, जो परंपरा से पशुपालन में लगी हैं और अपने और अपने जानवरों के लिए वन उत्पादों पर निर्भर हैं। लेकिन इस कानून और इससे पूर्ववर्ती कानूनों के तहत इन्हें वनों में घुसने से ही रोका जाता है। इस कारण इनका परंपरागत आधार खत्म हो गया है। इनमें रब्बारी, गायका, रायका, बघेल, पाल, मालधारी और भरवार जातियां प्रमुख हैं, जो राजस्थान, गुजरात और मध्य प्रदेश के इलाकों में विचरण करती हैं।

कृषि पूर्व की व्यवस्था में बड़ी संख्या में जनजातीय समुदाय झूम खेती करते हैं। उनके अधिकारों के बारे में भी इस कानून में कुछ नहीं है। आदिम जनजातियों में आंध्र प्रदेश के चेंचू आदिवासी हैं। जो इलाका पहले चेंचू के लिए रिजर्व था, वहां अब टाइगर रिजर्व बना दिया गया है। इस तरह चेंचू अब अपने ही परंपरागत क्षेत्र से बेदखल हो गए हैं। होना तो यह चाहिए था कि इस कानून में मुकम्मल अध्ययन और सर्वेक्षण के आधार पर इन घुमंतू और अर्द्धघुमंतू जनजातियों की विशेष स्थितियों को देखते हुए अलग से प्रावधान किया जाता, लेकिन अब जब ऐसा नहीं हो पाया, तो अब भी इसे सुधारा जा सकता है। केंद्र को चाहिए कि वह राज्यों से विचार-विमर्श कर इनके लिए अलग से दिशा-निर्देश जारी करे और इस पर नजर रखने के लिए एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया जाए। तभी इनके साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को खत्म करने के वायदे को कुछ हद तक पूरा किया जा सकता है।

अतुल कुमार सिंह
लेखक हिन्दुस्तान से जुड़े हैं

हिन्दुस्तान
Hindustan

सर्वपक्षीय नवीन दल की स्थापना

नई दिल्ली, २१ मार्च। भारतीय राजनीतिक प्रवाह इतना अधिक अस्थिर और गहरा है कि उसका तेज भी नहीं दिखता। परिस्थिति इतनी उलझी हुई है कि वह सुलझती नहीं है और इसके फलस्वरूप अलग-अलग व्यक्तियों की पक्षीय मनोवृत्ति पर भी प्रत्याघात हो रहा है। इस गंभीर वातावरण का भेदन करने का कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी के नेता लो. माधवराव श्रीहरि अणे ने निर्णय किया है। विश्वस्त सूत्र से समाचार मिला है कि १९३४ में केन्द्रीय असेम्बली के निर्वाचन के समय बनी कांग्रेस नेशनलिस्ट पार्टी का विसर्जन करने के लिए वे पार्टी के संस्थापक महामना मदनमोहन मालवीय जी से पत्र-व्यवहार कर रहे हैं।

देश की स्थिति सुधारने की खातिर लो. अणे का उद्देश्य हिन्दुओं, मुसलमानों, सिखों और अन्यों का एक नवीन सर्व पक्षीय दल स्थापना करना है।

सत्तर साल पहले, 22 मार्च, 1941 को प्रकाशित

सत्याग्रह

लघुकथा

बात सन 1500 के आसपास की है। नवद्वीप के काजी बारबहक ने अपने एक आदेश में धार्मिक जुलूसों व भजन-कीर्तनों पर रोक लगा दी। जुलूस निकालना और भजन-कीर्तन करना चैतन्य महाप्रभु का नित्य का नियम था। महाप्रभु ने काजी के फरमान का विनम्रतापूर्वक उल्लंघन करने का निर्णय किया। अपने कुछ शिष्यों के साथ कीर्तन करते हुए वह काजी के घर की ओर चल पड़े। उसके घर तक पहुंचते-पहुंचते पूरा शहर उनके साथ था। भीड़ देखकर काजी डरकर छिप गया। चैतन्य के आश्वासन पर वह निकला। महाप्रभु ने कहा, ‘आपने जो किया, वह किसी न्यायप्रिय शासक को शोभा नहीं देता।’ काजी ने अपना आदेश वापस ले लिया। महाप्रभु के सविनय अवज्ञा को ही आगे चलकर गांधीजी ने सत्याग्रह का रूप दिया।

सुधीर निगम